अध्याय-12

भक्तियोग-नामक 12वाँ अ0।।

[1-12 साकार और निराकार के उपासकों की उत्तमता का निर्णय और भगवत्प्राप्ति के उपाय का विषय]

अर्जुन उवाचः-एवं सततयुक्ता ये भक्ताः त्वां पर्युपासते। ये च अपि अक्षरं अव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।। 12/1

सततयुक्ता एवं ये भक्ताः त्वां	सदा योगयुक्त हुए ऐसे जो भक्तजन {साकार सौम्यरूप} आपकी {तन-मन-धन-सबंधादि}
पर्युपासते च ये अक्षरं अव्यक्तं	सब प्रकार से उपासना करते हैं और जो अविनाशी, अदृष्ट {निराकार शिवज्योति} को
अपि तेषां के योगवित्तमाः	भी {सदा याद करते हैं}, उन {सगुण-निर्गुणोपासियों} में कौन योग के मर्म को अधिक जानते हैं?

श्रीभगवानुवाचः-मयि आवेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परया उपेताः ते मे युक्ततमा मताः।। 12/2

ये मनः मयि आवेश्य नित्ययुक्ताः	जो {अपने चंचल} मन को {अव्यभिचारी रूप से} मुझमें स्थिर करके सदा योगयुक्त हुए,
परया श्रद्धया उपेताः मां उपासते	परम श्रद्धा से भरकर मुझ {व्यक्तिगत अर्जुन के स्थाई रथ में शिवज्योति} को याद करते हैं,
ते मे युक्ततमा मताः	वे मेरे {सिरचढ़े अष्टमूर्ति पु. संगम में} सब {16108} योगियों में श्रेष्ठतम माने गए हैं;

ये तु अक्षरं अनिर्देश्यं अव्यक्तं पर्युपासते। सर्वत्रगं अचिन्त्यं च कूटस्थं अचलं ध्रुवं।। 12/3

तु ये अक्षरमनिर्देश्यं	किंतु जो {योगी अभोक्ता होने से कभी} पतित न होने वाले, {आत्यंतिक वा समान सूक्ष्म होने से} अनिर्वचनीय,
सर्वत्रगं अचिन्त्यं	{त्रिकालदर्शी होने से} सब जगह पहुँचने वाले, {सर्व साधारण देवों द्वारा} चिंतन न करने योग्य को,
कूटस्थं अचलं ध्रुवं	{पुरुषार्थ में सर्वोच्च ब्राह्मण चोटी/एवरेस्ट} पर्वतशिखरस्थ, अचल-{अडोल-चेतन} ध्रुव तारा को
च अव्यक्तं पर्युपासते	और निराकार {सो सदा अभोक्ता शिवज्योति} को भली-भाँति {वाचारहित मन-बुद्धि से} याद करते हैं,

सन्नियम्य इन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः। ते प्राप्नुवन्ति मां एव सर्वभूतहिते रताः।। 12/4

ते इन्द्रियग्रामं सन्नियम्य	वे {अनंगयोगी} सभी 11 इन्द्रियों को पूरा संयम में रखकर, {स्थिर बनी मन-बुद्धि से}
सर्वत्र समबुद्धयः सर्वभूतहिते	सर्व {स्थानिक परिस्थितियों} में समदर्शी, सब {तुच्छ या श्रेष्ठ} प्राणियों के कल्याण में
रताः मां एव प्राप्नुवन्ति	लगे हुए, {जन्म-जन्मान्तर अद्वैत भाव से} मुझ {एकलिंग भगवान} को ही प्राप्त होते हैं।

क्लेशः अधिकतरः तेषां अव्यक्तासक्तचेतसां। अव्यक्ता हि गतिः दुःखं देहवद्भिः अवाप्यते।। 12/5

अव्यक्तासक्तचेतसां तेषां	अव्यक्त निराकार {सूक्ष्मतमाणु अचिन्त्यरूप} में आसक्त हुए उन {योगियों} को
क्लेशः अधिकतरः हि देहवद्भिः	कठिनाई अधिक है; क्योंकि देहभानी {विधर्मी-विदेशी या अधर्मी सब धर्मपिताओं} द्वारा
अव्यक्ता गतिः दुःखं अवाप्यते	{देहांकार से} निराकारी गति {धर्म के धक्के खाकर बड़े परिश्रम से,} दुःखपूर्वक प्राप्त होती है;

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्पराः। अनन्येन एव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।। 12/6

तु मत्पराः ये सर्वाणि कर्माणि	किंतु मेरे {मूर्तिमंत शंकर के} आश्रित जो {तन धनादि के अफलाकांक्षी योगी} सब कर्मों को
मयि संन्यस्य अनन्येन योगेन	मुझ {योगीश्वर यज्ञ-पिता} में {मन-बुद्धि सहित} संपूर्णतया अर्पित कर अव्यभिचारी याद से
ध्यायन्तः मां एव उपासते	{अव्यक्तमूर्ति में} ध्यानमग्न हुए मेरी ही {प्रवेशनीय मूर्ति होने से अनवरत सहज} उपासना करते हैं,

तेषां अहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्। भवामि नचिरात् पार्थ मयि आवेशितचेतसां।। 12/7

तेषां मय्यावेशितचेतसां पार्थ	उन मेरे में {ही 'मद्भक्तो...मां नमस्कुरु' (गी.9-34) वाली} मन-बुद्धि वालों का, हे पृथ्वीराज!
अहं नचिरात्• मृत्युसंसार-	मैं {सुखसागर} •अतिशीघ्र {50-60 वर्षों में ही जन्म-जरा} मृत्यु-{दुख वाले} संसार {रूप विषय}

सागरात् समुद्धर्ता भवामि	{विकारों के} सागर से {लेशमात्र दुःखरहित कृतत्रेता के आधाकल्प तक} संपूर्ण उद्धार करने वाला हूँ।

•{'क्षिप्रं भवति धर्मात्मा'} (गी.9-31) {'क्षिप्रं...सिद्धिर्भवति'} (गी.4-12) {हि.आशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते (गी. 2-65)}

मयि एव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मयि एव अत ऊर्ध्वं न संशयः।। 12/8

मयि एव मन आधत्स्व मयि	मुझ {व्यक्त आदम/अर्जुन के तन में आए शिवज्योतिबिंदु} में ही मन लगा। मेरे में {अपनी}
बुद्धिं निवेशय अत ऊर्ध्वं मयि	{चंचल बनी मन-} बुद्धि को स्थिर कर। इस प्रकार ऊर्ध्वमुखी {हुए पंचानन परमब्रह्मरूप} मुझमें
एव निवसिष्यसि न संशयः	ही {लगावपूर्वक हृदय से जन्म-जन्मान्तर भी} निवास करेगा, {इसमें} संदेह नहीं है।

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरं। अभ्यासयोगेन ततो मां इच्छ आप्तुं धनञ्जय।। 12/9

धनंजय अथ मयि चित्तं स्थिरं	हे ज्ञानधनजेता! यदि मेरे {सूक्ष्माणुरूप अव्यक्त रूप} में चित्त को {निरंतर} स्थिरता पूर्वक
समाधातुं शक्नोषि न ततः	{सदाकाल} लगाने में समर्थ नहीं है, तो {सन्नद्ध एटामिक महाविनाश के वैरागसहित बारम्बार स्मृति के}
अभ्यासयोगेन मां आप्तुं इच्छ	योगाभ्यास द्वारा {मुकर्रर रथ में} मुझ {अव्यक्त शिवज्योति} को पाने की {सहज-2} इच्छा कर।

अभ्यासे अपि असमर्थः असि मत्कर्मपरमो भव। मदर्थं अपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिं अवाप्स्यसि।। 12/10

अभ्यासे अपि असमर्थः असि	{ऐसे योग-} अभ्यास में भी समर्थ न हो {तो जोड़ी बने रुद्रयज्ञ-अधिपति+देवदेव महारुद्र रूप}
मत्कर्मपरमः भव मदर्थं कर्माणि	मुझ {परमपिता+परमात्मा} प्रति कर्म करने वाला हो। मेरे {व्यक्तरूप के} लिए कर्मों को
कुर्वन् अपि सिद्धिं अवाप्स्यसि	करता हुआ भी {वैकुण्ठ के अतीन्द्रिय सुख की विष्णुलोकीय} सिद्धि को प्राप्त करेगा।

अथ एतत् अपि अशक्तः असि कर्तुं मद्योगं आश्रितः। सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।। 12/11

अथ एतदपि कर्तुमशक्तः	{वैकुण्ठ-सिद्धि हेतु} यदि इतना भी करने में {हीनभाव के कारण दुर्बल हृदय होने से} अशक्त

असि ततः मद्योगं आश्रितः	हो, तो मुझसे जुड़े {पिता-पुत्र-पत्नी आदि सर्वसम्बंधों की} शरण ले, {विनाशी दुनियाँ से}
यतात्मवान् सर्वकर्मफलत्यागं कुरु	अपने {चित्त} को वश करते हुए सब कर्मफलों {की इच्छा} का त्याग कर दे।

श्रेयो हि ज्ञानं अभ्यासात् ज्ञानात् ध्यानं विशिष्यते। ध्यानात् कर्मफलत्यागः त्यागात् शान्तिः अनन्तरं।। 12/12

अभ्यासात् ज्ञानं श्रेयो	{अज्ञानियों के ज्ञानरहित योग के} अभ्यास से {चतुर्मुखी ब्रह्मा से आया बेसिक ब्राह्मणों का गीता-} ज्ञान श्रेष्ठ है।
ज्ञानात् ध्यानं विशिष्यते	{बेसिक} ज्ञान {के सुनने-पढ़ने से चैतन्य ज्ञानसागर के एडवांस गीताज्ञान का} मंथन विशेष है।
ध्यानात् कर्मफलत्यागः	मनन-चिंतन से {हुई ब्राह्मण जन्म में यज्ञसेवा के} कर्मफल का {सम्पूर्ण अलौकिक} त्याग {श्रेष्ठ है};
हि त्यागात् अनंतरं शांतिः	क्योंकि त्याग के तुरंत बाद {आत्मस्थिति में भविष्यपद की निश्चयात्मक} शांति मिल जाती है।

[13-20 भगवत्-प्राप्त पुरुषों के लक्षण]

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।। 12/13

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः। मयि अर्पितमनोबुद्धिः यः मद्भक्तः स मे प्रियः।। 12/14

यः सर्वभूतानां अद्वेष्टा मैत्रः च	जो {क्रोधी,हिंसक,अहिंसक या भोले} सब प्राणियों में द्वेषभाव रहित है। मित्रता और
करुण एव निर्ममः निरहंकारः	करुणाभाव वाला है {तथा दैहिक सम्बन्धियों,पदार्थों आदि में} निर्मोही है, निरहंकारी है,
समदुःखसुखः क्षमी सन्तुष्टः	दुःख-सुख में समान, {सबके लिए} क्षमावान {सहनशील} है, {थोड़े में भी} संतोषी,
सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः	निरंतर योगी, चित्त का वशकर्ता, {मेरे में, परिवार में & मेरी मत में} दृढ़निश्चयी है,
मय्यर्पितमनोबुद्धिः मद्भक्तः स मे प्रियः	मेरे में मन-बुद्धि से अर्पणमय है- {ऐसा} वह मेरी श्रद्धा-भक्ति वाला मुझे प्रिय है।

यस्मात् न उद्विजते लोको लोकात् न उद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैः मुक्तः यः स च मे प्रियः।। 12/15

यस्मात् लोकः उद्विजते न च	जिससे लोग {महाविनाशकाल में भी} परेशान नहीं होते और {ऐसे ही सारी वसुधा में कुटुंब
यः लोकात् उद्विजते न च यः	वत् ऐसा मातृवत} जो लोगों से परेशान नहीं होता और जो {सदाकाल 'इच्छामात्रम अविद्या'}
हर्षामर्षभयोद्वेगैः मुक्तः स मे प्रियः	{होकर} आनन्द, क्रोध, भय {व} उत्तेजना से मुक्त है- वह मुझ {शिवस्वरूप} को प्रिय है।

अनपेक्षः शुचिः दक्षः उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।। 12/16

यः अनपेक्षः शुचिः दक्षः	जो {मेरे व्यक्तित्व सिवाय और कोई की} अपेक्षा न करे। {तन-मन & धन से} पवित्र, कुशल है,
उदासीनः गतव्यथः	{अपने-पराये,प्रिय-अप्रिय में} पक्षपातहीन, {अपने तन-मनादि की} व्यथाओं से रहित है,
सर्वारम्भपरित्यागी स मद्भक्तः मे प्रियः	सब {सांसारिक} कार्यों का भली-भाँति त्यागी वह मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः।। 12/17

यः न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति	जो {प्रिय से} न प्रसन्न होता है, न {अप्रिय में} द्वेषी है, न {कोई बात का} शोक करता है,
न कांक्षति यः शुभाशुभपरि-	न {किसी व्यक्ति या वस्तु की} इच्छा करता है {और} जो शुभ-अशुभ का भली-भाँति {सदा}
त्यागी भक्तिमान् स मे प्रियः	{काल} त्यागी है- {ऐसा मेरे से 'योगक्षेमं' (गी.,9-22) में अटल} श्रद्धा-भक्ति वाला वह मुझे प्रिय है।

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।। 12/18

तुल्यनिन्दास्तुतिः मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्। अनिकेतः स्थिरमतिः भक्तिमान् मे प्रियो नरः।। 12/19

शत्रौ च मित्रे तथा मानापमानयोः समः	{अप्रिय} शत्रु में और {प्यार भरे} मित्र में, उसी तरह {कैसे भी हुए} मान-अपमान में समान,

शीतोष्णसुखदुःखेषु समः च संगविवर्जितः	सर्दी-गर्मी, सुख-दुःख {आदि द्वंद्वों} में समान और आसक्ति से सर्वथा रहित,
तुल्यनिन्दास्तुतिः मौनी येन	{शत्रु से} निंदा,{चापलूसों की} स्तुति में समान, {मन से भी} अंतर्मुखी, जो {अनायास सुखपूर्वक}
केनचित् संतुष्टः अनिकेतः	{अपने ही कर्मानुसार} कुछ {मिले या न मिले उस} में संतुष्ट, घरबार से रहित {पूरा बेघर/बैगर},
स्थिरमतिर्भक्तिमान्नरः मे प्रियः	{चंचल मन से फ्री} स्थिरबुद्धि, {ऐसा अटल} भक्तिभाव वाला मनुष्य मुझे {सदा} प्रिय है;

ये तु धर्म्यामृतं इदं यथा उक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्ताः ते अतीव मे प्रियाः।। 12/20

तु ये मत्परमा श्रद्दधानाः यथा उक्तं	परंतु जो {एकमात्र} मेरे परम {ब्रह्मामुख के} आश्रित हुए श्रद्धावान्, ऊपर कहे गए
इदं धर्म्यामृतं पर्युपासते	इस धारणामृत का {कि 'तुम्हहिं छाँड़ि गति दूसरि नाहीं'-ऐसे} भलीभाँति उपासक हैं,
ते भक्ताः मे अतीव प्रियाः	वे भक्त {पिता के लिए अपने औरस, आज्ञाकारी & ईमानदार पुत्रवत्} मुझे अति प्यारे हैं।